A Pratibha Spandan Journal

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 14, Issue 01, January-June, 2026

ठुमरी की रानी गिरिजा देवी: गुरु-शिष्य परम्परा के माध्यम से बनारस शैली का संरक्षण और संवर्धन

Ranju[1], Prof. Jeet Ram Sharma[2]

1 Research Scholar, Department of Music, H.P. University, Shimla
2 Chairperson, Department of Music, H.P. University, Shimla

Read the Article Online

Cite this Article

Published on 02 May, 2026

Ranju, and Sharma J.R.. (2026). Thumri Ki Rani Girija Devi: Guru-Shishya Parampara Ke Madhyam Se Banaras Shaili Ka Sanrakshan Aur Sanvardhan. Swar Sindhu, 14(1), 148-152.

सार

प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से बनारस की समृद्ध सांगीतिक विरासत में महिलाओं के योगदान और विदुषी गिरिजा देवी के केंद्रीय स्थान का विश्लेषण किया गया है। सदियों से काशी की धरती अर्ध-शास्त्रीय गायन शैलियों का केंद्र रही है, जहाँ रसूलन बाई और सिद्धेश्वरी देवी जैसी महान साधिकाओं ने 'पूरबी अंग' गायकी को एक विशिष्ट पहचान दी। इसी श्रृंखला की सबसे सशक्त कड़ी के रूप में गिरिजा देवी ने ठुमरी, दादरा, चैती और कजरी जैसी विधाओं को कोठों की संकीर्णता से मुक्त कर अंतरराष्ट्रीय मंचों पर शास्त्रीय गरिमा के साथ प्रतिष्ठित किया। यह शोध पत्र गिरिजा देवी की गायन शैली की बारीकियों, जैसे शब्द-प्रधानता और भाव-सौंदर्य, का परीक्षण करता है। साथ ही ठुमरी के सामाजिक उत्थान, इसकी शास्त्रीय गरिमा को पुनर्जीवित करने में महिलाओं की भूमिका और गिरिजा देवी द्वारा तैयार की गई शिष्या परंपरा का गहन विश्लेषण करता है। यह बनारस घराने की महिला स्वर परंपरा के सामाजिक-सांस्कृतिक विकास और इस परंपरा को भावी पीढ़ियों के लिए संस्थागत रूप देने में अप्पा जी (गिरिजा देवी) की भूमिका को रेखांकित करता है। निष्कर्षतः, यह अध्ययन दर्शाता है कि कैसे गिरिजा देवी ने लोक-तत्त्वों और शास्त्रीयता के समन्वय से बनारस की स्वर परंपरा को एक नया जीवन प्रदान किया।

कुंजीशब्द :पूरबी अंग, स्वर परम्परा, बनारस घराना, ठुमरी, शास्त्रीय गरिमा

प्रस्तावना

भारतीय शास्त्रीय संगीत के मानचित्र पर बनारस घराना अपनी भावपूर्ण ठुमरी, दादरा और टप्पा के लिए अद्वितीय स्थान रखता है। गंगा की लहरों की तरह ही यहाँ की गायकी में एक सहज प्रवाह और ठहराव है। बनारस घराने की सबसे बड़ी शक्ति इसकी 'भाव-प्रधानता' है। जहाँ अन्य घरानों ने तकनीकी जटिलताओं पर ध्यान दिया, वहीं बनारस ने 'हृदय की पुकार' को संगीत का आधार बनाया। इस परंपरा को सहेजने में महिलाओं का योगदान पुरुषों से कहीं अधिक गहरा रहा है। विशेष रूप से उप-शास्त्रीय गायन में महिला स्वर ने जो सूक्ष्मता पैदा की, उसने ठुमरी को वैश्विक पहचान दिलाई। 'ठुमरी की रानी' विदुषी गिरिजा देवी इस परंपरा की वह धुरी हैं, जिन्होंने लोक संगीत और शास्त्रीय संगीत के बीच एक अटूट सेतु का निर्माण किया। इस घराने की विशेषता इसकी 'बोल-बनाव' शैली है, जिसमें स्वरों के माध्यम से शब्दों के अर्थ को विस्तार दिया जाता है। इस विधा को सहेजने और संवारने में महिला कलाकारों की भूमिका प्राथमिक रही है।

बनारस घराने का उद्भव और महिला कलाकारों का स्थान

भारतीय संगीत को सुरक्षित रखने में घरानों का बड़ा हाथ है। अनेक कठिनाइयों का सामना करके उपहास तथा व्यंग्य सहन करके इन लोगों ने इस कला को जीवित रखा है। परम्परा के बलबूते पर पनपने वाली गायकी घरानों के कारण ही प्राणवान है। यथार्थ में परम्परा, घराना और गायकी - ये ही तीन ऐसी सीढ़ियाँ और तीन विश्राम स्थल हैं, जिन्हें पार करके हम संगीत पर्वत के शिखर पर पहुँचते हैं। जहाँ से हम हिन्दुस्तानी संगीत के समूचे दृश्य को देखकर संगीत की पूर्ण दृष्टि ग्रहण कर सकते हैं। देखा जाये तो इन तीनों का समन्वय एक ही शब्द 'घराना' में निहित है।[1]

बनारस घराना 18वीं-19 वीं शताब्दी में पंडित रामसहाय जी के समय से विकसित हुआ, लेकिन स्वर संगीत के क्षेत्र में यहाँ की महिलाओं ने एक समानांतर और सशक्त इतिहास रचा। इतिहास गवाह है कि बनारस की कला परंपरा में 'नगरवधुओं' या 'तवायफों' का बड़ा योगदान रहा। वे केवल नर्तकी नहीं थीं, बल्कि उच्च कोटि की विदुषी थीं। बड़ी मोतीबाई, रसूलन बाई और सिद्धेश्वरी देवी ने इस कला को उस समय जीवित रखा, जब

समाज इसे हेय दृष्टि से देखता था। 20 वीं शताब्दी के मध्य में जब रियासतें खत्म हुईं, तब इन महिला कलाकारों ने भारी संघर्ष किया। इसी काल में गिरिजा देवी का उदय हुआ, जिन्होंने इस कला को 'कोठों' के बंद कमरों से निकालकर सार्वजनिक मंचों की गरिमा प्रदान की।

देश की सांस्कृतिक हृदयस्थली काशी नगरी में समय-समय पर विभिन्न क्षेत्रों में एवं संगीत क्षेत्र में ऐसे ऐसे कलाकार उत्पन्न हुए हैं, जिन्हें सहज ही देश ने 'कलागौरव' की श्रेणी प्रदान की है। इसमें एक नाम विगत चार पाँच दशकों से शास्त्रीय संगीत-क्षितिज की देदीप्यमान नक्षत्र, देश की सर्वाधिक लोकप्रिय सुप्रतिष्ठित गायिका काशी की श्रीमती गिरिजा देवी का है, जिनके कंठमाधुर्य से सम्पूर्ण देश ही नहीं, अपितु विदेश के लाखों संगीतप्रेमी भी सुपरिचित हो चुके हैं।[2]

बनारस घराने की महिला स्वर परम्परा का इतिहास

20वीं शताब्दी के प्रारंभ में बनारस की संगीत परंपरा को बड़ी मोती बाई, रसूलन बाई और सिद्धेश्वरी देवी जैसी दिग्गज गायिकाओं ने सींचा। इन कलाकारों ने उप-शास्त्रीय संगीत (Semi-classical music) को लोक संगीत की मिठास और शास्त्र की मर्यादा के साथ प्रस्तुत किया।

विदुषी गिरिजा देवी: ठुमरी का नया युग

ग्रन्थों के अध्ययन काल में ठुमरी की उत्पति एवं इतिहास का तो वर्णन होता है परन्तु ठुमरी गायकों अथवा उनके घरानों का उल्लेख नहीं है। राजदरबारों में भी इसके गायन का वर्णन नहीं होने से स्पष्ट होता है कि ठुमरी निम्नस्तरीय अथवा छोटे समुदायों में ही विकसित थी, जिसके लक्षण स्वरूप ठुमरी तवायफों / वेश्यायों /गोनिहारिनों तक सिमित रही , जिसे घरानेदार संगीतज्ञ हेय दृष्टि से देखते रहे और उसे दीर्घकाल तक क्षुद्र प्रकृति के संगीत की संज्ञा प्राप्त होती रही। अपने एक लेख में ठुमरी के सन्दर्भ में बताते हुए आचार्य बृहस्पति ने कहा है कि, सन 1945 -1946 ई. में हमने लखनऊ रेडियो से प्रसारित एक वार्ता में कहा था कि "ठुम" ठुमकने का द्योतक है और "री" अन्तरंग सखी से अपने अंतर की बात कहने का। ठुमरी का विषय नायिका के अंतर की असंख्य भाव लहरियों का चित्रण है।[3]

अन्य विशिष्ट गुणों के साथ प्राकृतिक एवं स्वाभाविक रूप से नारी जाति की संगीत में रूचि स्वाभावत: प्रस्फुटित हुई; क्योंकि संगीत में मृदुलता है, नारी में सुकुमारता, संगीत में मधुरता है एवं नारी सुमधुर है, संगीत ज्ञानपूर्ण है एवं नारी रास की अधिष्ठात्री और भावनाओं की प्रतीक है। यही कारण है कि अनादिकाल से नारी एवं संगीत दो विभिन्न रूप न होकर एक दूसरे में अर्न्तनिहित एक स्वरूप समझे जाने लगे।[4] गिरिजा देवी (1929 -2017) ने ठुमरी को अश्लीलता के पुराने सामाजिक ठप्पे से मुक्त कराकर उसे आध्यात्मिक और शास्त्रीय गरिमा प्रदान की। उन्होंने 'ठुमरी' को ख्याल के समकक्ष खड़ा किया और इसे विश्व के प्रतिष्ठित संगीत समारोहों का मुख्य हिस्सा बनाया। बनारस में जन्मीं विदुषी गिरिजा देवी ने पांच वर्ष की आयु में पंडित सरजू प्रसाद मिश्रा के मार्गदर्शन में संगीत की शिक्षा प्राप्त की और आठ दशकों से अधिक समय तक हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत को समर्पित रहीं। ठुमरी, कजरी, चैती, टप्पा और ख्याल सहित उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत के सभी गायन रूपों में उनकी निपुणता के लिए वे प्रसिद्ध थीं। विदुषी गिरिजा देवी ने अपने संगीत करियर की शुरुआत 1949 में इलाहाबाद से प्रसारित अखिल भारतीय रेडियो कार्यक्रम में एकल प्रस्तुति से की थी। अपने शानदार संगीत करियर में उन्हें अनेक पुरस्कार और सम्मान प्राप्त हुए। उन्हें भारत के सात विश्वविद्यालयों से मानद स्नातक की उपाधि प्राप्त हुई। भारत सरकार ने विदुषी गिरिजा देवी को तीन सर्वोच्च नागरिक पुरस्कारों - पद्म विभूषण, पद्म भूषण और पद्म श्री से सम्मानित किया। उन्हें संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार और संगीत नाटक अकादमी फैलोशिप भी प्राप्त हुई। डाक विभाग ने उन्हें डाक टिकट पर चित्रित करके सम्मानित किया। 2003 में, भारतीय शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में उनके अद्वितीय योगदान के लिए उन्हें आईटीसी सम्मान से नवाजा गया।

विदुषी गिरिजा देवी आईटीसी संगीत अनुसंधान अकादमी का गौरव थीं। 1977 में इसकी स्थापना से ही, वे भारतीय शास्त्रीय संगीत की अमूल्य विरासत को पोषित और प्रचारित करने के आईटीसी-एसआरए के व्यापक दृष्टिकोण की प्रमुख ध्वजवाहक थीं। सभी उन्हें प्यार से 'अप्पाजी' कहते थे। उनके आकर्षक व्यक्तित्व, जीवंत हास्यबोध, रंगीन बनारसी हिंदी भाषी होने और हर व्यक्ति से तुरंत जुड़ जाने की क्षमता के कारण उन्हें सभी का प्रिय और प्रशंसनीय मानते थे। आईटीसी-एसआरए में, विदुषी गिरिजा देवी ने गुरु और शिष्य के बीच सच्चे रिश्ते का प्रतीक बनकर, विश्वास, ज्ञान, निरंतरता और कला की सार्वभौमिक महिमा के अटूट बंधन को पोषित किया।

गिरिजा देवी: गायकी की विशेषताएं

गिरिजा देवी की गायकी का सबसे सशक्त पक्ष 'पूरब अंग' की ठुमरी थी। लखनऊ की ठुमरी जहाँ 'अदाकारी' और 'चपलता' पर टिकी थी, वहीं गिरिजा देवी ने बनारस की ठुमरी में 'ठहराव' और 'गंभीरता' को प्रधानता दी।

बोल-बनाव की कला: उनके गायन में एक ही पंक्ति को भाव के अनुसार कई बार नए स्वरूप में प्रस्तुत किया जाता था। उदाहरण के लिए, जब वे *"रस के भरे तोरे नैन"* गाती थीं, तो 'रस' शब्द पर उनका काम कभी प्रेम, कभी मनुहार तो कभी भक्ति का आभास कराता था।

मींड और कण का प्रयोग: वे स्वरों को झटके से नहीं बल्कि एक रेशमी धागे की तरह जोड़ती थीं। उनके 'कण' स्वर को एक चमक प्रदान करते थे, जिससे ठुमरी की शास्त्रीयता बनी रहती थी।

लोक संगीत को शास्त्रीय गरिमा

गिरिजा देवी ने उत्तर प्रदेश के आंचलिक संगीत—चैती, कजरी, झूला और दादरा—को सिर्फ मनोरंजन का साधन नहीं रहने दिया। उन्होंने **'कजरी'** (जैसे: *"बरसन लागी बदरिया"*) को इस प्रकार सुरों में पिरोया कि वो मंच पर ध्रुपद और ख्याल के समान सम्मानजनक बन गई। उनकी **'चैती'** में बनारस की गलियों की सोंधी महक और रामनवमी के उल्लास का अद्भुत मेल मिलता था। उन्होंने सिद्ध किया कि 'लोक संगीत ही 'शास्त्र' की जननी है। गिरिजा देवी ने ठुमरी को "मर्यादित श्रृंगार" से जोड़ा। उनकी गायकी में 'पुरब अंग' की प्रधानता थी, जहाँ शब्दों के चयन और उनके भावों पर विशेष बल दिया जाता था। उन्होंने ठुमरी में 'बोल-बनाव' की कला को एक नए स्तर पर पहुँचाया।

ठुमरी का पूरब अंग

बोलबनाव की ठुमरी का प्रसार विशेष रूप से उत्तर भारत के पूर्वी भाग अर्थात पूर्वी उत्तर प्रदेश व बिहार की ओर अधिक होने के कारण इसे प्रायः "पूरब अंग" की ठुमरी कहा जाता है। उत्तर भारत के पूर्वी प्रदेशों से संबद्ध होने के कारण पूरब अंग की बोल बनाव ठुमरियों पर चैती, कजरी, पूरबी, घाटो आदि लोकगीतों की धुनों का भी बहुत प्रभाव है। पूरब अंग की बोलबनाव ठुमरी गाने का ढंग साधारणतया पूर्वोक्त रूप से होते हुए भी उसकी गायकी में बोलों व स्वरों के 'बढत' अर्थात विस्तार का एक विशेष क्रम होता है, जिसके अनुसार पहले 'बंदिश" की प्रकृति के अनुसार बोलबनाव करते हुए ठुमरी में व्यवृहत होने वाले मुख्य राग की "बढ़त" की जाती है।[4]

गिरिजा देवी की शिष्या परंपरा और आधुनिक महिला कलाकार

विदुषी गिरिजा देवी केवल एक महान गायिका ही नहीं, बल्कि एक युग-प्रवर्तक गुरु भी थीं। उन्होंने बनारस घराने की मशाल को अगली पीढ़ी की महिला कलाकारों के हाथों में सौंपने के लिए 'गुरु-शिष्य परंपरा' का कड़ाई से पालन किया। उनकी शिष्या परंपरा ने यह सुनिश्चित किया कि बनारस की 'पूरब अंग' गायकी का अस्तित्व भविष्य में भी सुरक्षित रहे। उनके इस काम में उनकी प्रमुख महिला शिष्याओं का योगदान निम्नलिखित है:

1. मालिनी अवस्थी

मालिनी अवस्थी जी का जन्म 11 फरवरी 1967 को कन्नौज (उत्तर प्रदेश) में हुआ, जो एक सुप्रसिद्ध भारतीय गायिका हैं, जिन्हें आमतौर पर भारत की लोकसंगीत की रानी कहा जाता है। संगीत के शास्त्रीय रूप से प्रशिक्षित होने के बाद, वह हिंदुस्तानी संगीत के विभिन्न रूपों में समान रूप से माहिर है जैसे कि दादरा, ठुमरी, कजरी, चैती इत्यादि। पद्म विभूषण विदुषी गिरिजा देवी जी की गंडा-बंध शिष्या, विदुषी मालिनी अवस्थी बनारस घराने के 'चौमुखी गायन' की पारखी हैं। वह अवध, भोजपुरी, बुंदेली और ब्रज जैसी कई बोलियों और भाषाओं पर समान रूप से पकड़ रखती हैं। संगीत के क्षेत्र में दशकों की लंबी सेवा को स्वीकार करते हुए, भारत सरकार ने आपको 2016 में नागरिक सम्मान "पद्म श्री" से सम्मानित किया। वह वर्तमान में सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में एक विजिटिंग प्रोफेसर हैं। मालिनी जी के शब्दों में "लोक संगीत ही सब कुछ है। यहाँ तक की राग की बंदिशों में भी लोक संगीत का ही रंग दखने को मिलता है। जा जा रे अपने मंदिरवा,सुन पावेगी सास ननदिया, जा जा रे अपने मन्दिरवा, भले ही राग भीमपलासी की बंदिश हो,लेकिन इसमें में जीवन का रंग साफ़ झलकता है।"[5] गिरिजा देवी की सबसे प्रसिद्ध शिष्याओं में से एक, जिन्होंने न केवल ठुमरी और दादरा, बल्कि कजरी, चैती और सोहर जैसे लोकगीतों को अंतरराष्ट्रीय मंचों पर एक नई पहचान दी। उन्होंने अपनी गुरु की 'अदाकारी' और 'भाव-पक्ष' को पूरी तरह आत्मसात किया है। आप ने ठुमरी, दादरा और कजरी जैसी उप-शास्त्रीय विधाओं को लोक संगीत के साथ जोड़कर व्यापक पहचान दिलाई।

2. रीता देव

डॉ. रीता देव एक हिंदुस्तानी शास्त्रीय गायिका हैं। आप ठुमरी गायिका पद्मविभूषण विदुषी गिरिजा देवी जी की शिष्या हैं। देव ने अपनी शास्त्रीय संगीत की प्राथमिक शिक्षा गुरु निर्मल आचार्य के मार्गदर्शन में कम उम्र में ही पूरी कर ली थी। आपने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय से एम.ए. करने के बाद ग्वालियर घराने के प्रो. चित्तरंजन ज्योतिषी के मार्गदर्शन में शास्त्रीय संगीत में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। आपको बनारस घराने के महान

गायक स्वर्गीय पंडित महादेव प्रसाद मिश्र के सानिध्य में सुगम शास्त्रीय संगीत सीखने का भी सुनहरा अवसर मिला। डॉ. रीता ने बनारस घराने की सुंदर परंपरागत गायन शैली पर अपनी छाप छोड़ते हुए, पद्मविभूषण विदुषी गिरिजा देवी जी से प्रशिक्षण प्राप्त किया। डॉ. रीता देव को पुरवांग गायकी की सुंदर विरासत को आगे बढ़ाने के लिए गिरिजा देवी जी ने गुरु-शिष्य परंपरा में सबसे कीमती आशीर्वाद दिया, जिसे गुरु और शिष्य के बीच बहुत ही विशेष (आध्यात्मिक समारोह गंडा-बंधन) माना जाता है। वर्तमान में आप आगरा कॉलेज, आगरा में संगीत विभागाध्यक्ष के पद पर कार्यरत हैं। आपको पंडित ओंकारनाथ ठाकुर पुरस्कार, स्वर रत्न, संगीत रत्न सहित कई प्रतिष्ठित पुरस्कार और सम्मान प्राप्त हुए।

3.लावण्या कीर्ति सिंह काव्या

प्रो. लावण्य कीर्ति सिंह काव्या संगीत और शिक्षा के क्षेत्र में सुपरिचित नाम है। संगीत प्रेमीपिता चंद्र किशोर सिंह और माता श्यामा सिंह की संतान के रूप में डॉ. काव्या का जन्म छपरा (बिहार) में हुआ। चार भाई -बहनो में सबसे बड़ी डॉ. काव्या के परिवार में संगीतमय माहौल था, जिस कारण संगीत में रुचि होना बहुत स्वाभाविक था। तीन वर्ष की अवस्था में ही सगीत की शिक्षा इनकी माता जी द्वारा आरम्भ हो गई थी। लगभग छः वर्ष की उम्र से स्थानीय पं आदित्यनाथ झा द्वारा गायन की विधिवत शिक्षा लगभग 16 वर्षो तक चली और उनके निर्देशन में शिक्षा ग्रहण करते हुए संगीत (गायन) की संगीत प्रवीण तक की उपाधि प्रयाग संगीत समिति, इलाहाबाद से प्राप्त की। संगीत (प्रतिष्ठा) के साथ स्नातक और गायन, संस्कृत और नाटय विषयों से स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त डॉ. सिंह ने जे आर एफ (यूजीसी) में चयन के बाद काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के गायन विभाग से प्रो. प्रदीप कुमार दीक्षित 'नेहरंग' के निर्देशन में पीएच डी की उपाधि हेतु शोध -कार्य किया। साथ ही , इसी वर्ष (1991) से बनारस घराना के सुप्रसिद्ध विदुषी गायिका 'पदमविभूषण ' श्रीमती गिरजा देवी से ठुमरी और पं जालपा प्रसाद मिश्र से ख्याल गायन की शिक्षा आरम्भ हुई जो वर्ष 1995 तक निरन्तर चलती रही। वर्ष 1996 में इनका चयन ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा के विश्वविद्यालय संगीत एवं नाटय विभाग में संगीत की व्याख्याता के रूप में हुआ। वर्तमान में डॉ. सिंह प्रोफेसर सह संकायाध्यक्ष, ललित्त कला संकाय है।

3. पद्मजा चक्रवर्ती

पद्मजा का जन्म पूर्वी भारत के शिलांग में श्री नैनी गोपाल गोस्वामी और श्रीमती शीला गोस्वामी के घर हुआ था। उनके पिता नैनी गोपाल गोस्वामी (बेनू) हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत में विशेष रुचि रखने के साथ संगीत के एक उत्साही प्रेमी थे, जो कि दूरसंचार विभाग, भारत सरकार के साथ अपनी सेवा के दौरान एक शौक के रूप में संगीत को भी अपने जीवन में अपना चुके थे। उन्होंने छह साल की एक बहुत ही नाज़ुक उम्र में संगीत की दुनिया में पद्मजा को संगीत से परिचित करवाया, और संगीत सीखने के लिए उसे स्थानीय संगीतज्ञों के सानिध्य में रखा। पद्मजा की प्रतिभा शास्त्रीय, अर्ध-शास्त्रीय शैलियों जैसे कि ठुमरी, टप्पा, चैती, और होरी के साथ भक्ति मेंसंगीत भी है। पद्मजा भारत के मुखर संगीतकार की एक दुर्लभ श्रेणी से संबंधित हैं, जो समान रूप से निपुण और समीक्षकों द्वारा प्रशंसित हैं। बनारस घराने की प्रसिद्ध गायिका, पद्मविभूषण गिरिजा देवी जी' द्वारा दी गई तालीम के माध्यम से उन्होंने कोमलता और पुरानी तकनीक द्वारा अपनी अनूठी-शैली का उचित सम्मिश्रण कर, उसे आत्मसात करने का सफल प्रयास किया।

4. पिऊ मुखर्जी

हावड़ा, पश्चिम बंगाल में जन्मी पिऊ मुखर्जी भारतीय शास्त्रीय संगीत व विशेषज्ञ के तौर पर जानी जाती हैं । उन्होंने संगीत के क्षेत्र में अपना पहला कदम अपनी मां श्रीमती प्रदीप्ता मुखर्जी और अपने दादा स्वर्गीय बीरेश्वर मुखर्जी, जो स्वयं संगीत सम्राट विश्वदेव चटर्जी के शिष्य थे, के कुशल दिशा निर्देशन में रखा। बाद में उन्हें प्रो. निहार रंजन बंदोपाध्याय (रवींद्र भारती विश्वविद्यालय के पूर्व विभागाध्यक्ष) द्वारा संगीत के मधुर मार्ग पर निर्देशित किया गया। जल्द ही उन्हें प्रख्यात संगीत साम्राज्ञी - पद्मविभूषण- श्रीमती गिरिजा देवी जी से मार्गदर्शन प्राप्त हुआ, जिनके अधीन उन्होंने कठोर रियाज़ किया।

बहुत ही कम समय में उनकी लगन और प्रतिभा को कई पेशेवर प्रदर्शन क्षेत्रों में मान्यता मिली, जहाँ उन्हें ख्याल और ठुमरी में श्रेष्ठ गायिकाओं में गिना गया। इनमें पश्चिम बंग राज्य संगीत अकादमी, साल्ट लेक कल्चरल एसोसिएशन, पंडित रवि किचलू फाउंडेशन, और कई अन्य प्रतिष्ठित मंच शामिल हैं। उन्होंने 1999 में ख्याल के लिए पंडित कृष्ण कुमार गांगुली पुरस्कार जीता, जिसके तुरंत बाद उन्हें ऑल इंडिया रेडियो प्रतियोगिता में ठुमरी / दादरा / टप्पा गायिकी में प्रथम स्थान मिला। 2001 में उन्होंने भारत सरकार के पर्यटन और संस्कृति मंत्रालय से राष्ट्रीय छात्रवृत्ति जीतकर एक बार फिर अपना दृढ़ संकल्प साबित किया। 2017 में उन्हें अखिल भारतीय पुरव अंग गायकी उत्सव, नई दिल्ली में गिरिजा देवी पुरस्कार (विशेष कलाकार) से सम्मानित किया गया।

5. शालिनी वेद त्रिपाठी

श्रीमती शालिनी वेद भारत की सुप्रसिद्ध गायिका संगीतकार व संगीत निर्देशक हैंI आपका जन्म उत्तरप्रदेश के कानपुर शहर में माता संतोष त्रिवेदी व पिता श्री राम शंकर त्रिवेदी जी के घर हुआI आपको पद्मविभूषण विदुषी गिरिजा देवी जी से एवं ग्वालियर घराने के संगीताचार्य पंडित गंगाधर राव से संगीत की औपचारिक शिक्षा प्राप्त हुयीI आपने संगीत के प्रचार-प्रसार के लिए अनेक संस्थाओं का गठन कियाI वर्तमान में आप लक्ष्मी देवी ललित कला अकादमी की डायरेक्टर हैं और डी.जी.पी.जी (दयानंद गर्ल्स पीजी) कॉलेज कानपुर उत्तर प्रदेश में एसोसिएट प्रोफेसर के पद पर कार्यरत हैंI आप संगीत के साथ-साथ अन्य कलाओं के संवर्धन हेतु काम कर रही हैं। डॉ. शालिनी वेद के अनुसार वे हमेशा लाइव शो की शक्ति में विश्वास रखती आई हैं। वे दृढ़ता से मानती हैं कि लाइव शो एकमात्र माध्यम हैं, जो वास्तव में दर्शकों को कलाकार से जोड़ते हैं। उसी के उपलक्ष्य में वह अपने गृहनगर, कानपुर में एक वार्षिक शो आयोजित करती हैं। डॉ. शालिनी वेद ने सांस्कृतिक विरासत को पुनर्जीवित करने और प्रदर्शन के उच्च स्तर को बनाए रखने के लिए वास्तव में कोई कसर नहीं छोड़ी है। इस महत्वाकांक्षी दृष्टिकोण के साथ, वह अपनी शैली में देश के सर्वश्रेष्ठ कलाकारों में अपनी पहचान बना रही हैं। डॉ. शालिनी वेद देश में अर्ध-शास्त्रीय और सुगम संगीत का प्रचार-प्रसार और प्रदर्शन करने में अग्रणी भूमिका निभा रही हैं। एक विश्व स्तरीय कलाकार के रूप में अपने स्वतंत्र करियर के अलावा, वह अपने पेशेवर जीवन—एसोसिएट प्रोफेसर (संगीत), डी.जी.पी.जी. (दयानंद गर्ल्स पीजी) कॉलेज, कानपुर, उत्तर प्रदेश का निर्वाह भी बखूबी कर रही हैं।

6. विदुषी सुनंदा शर्मा

बनारस घराने की परंपरा की ध्वजवाहक विदुषी सुनंदा शर्मा एक ऐसी ख्यातिप्राप्त शास्त्रीय गायिका हैं, जिन्होंने न केवल भारत में बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी भारतीय शास्त्री यसंगीत को गौरवान्वित किया है। सुनंदा शर्मा का व्यक्तित्व सौम्यता, साधना और संगीत के प्रति समर्पण का प्रतीक है। वे बनारस घराने की परंपरा की एक समर्थ प्रतिनिधि हैं, जिन्होंने अपनी गुरु विदुषी गिरिजा देवी जी से संगीत की बारीकियाँ सीखीं और उन्हें अपने गायन में आत्मसात किया। उनके कृतित्व में ठुमरी, दादरा, कजरी, होरी जैसे उपशास्त्रीय विधाओं के साथ-साथ ख्याल गायन में भी गहराई और परिपक्वता दिखाई देती है। विदुषी सुनंदा जी का जन्म हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा जिले में पठानकोट के पास एक छोटे से गांव 'डाह' में एक संगीत परिवार में हुआ था। उनके पिता पंडित सुदर्शन शर्मा एक भारतीय शास्त्रीय वायलिन वादक थे, जिन्होंने सुनंदा जी को शास्त्रीय संगीत सीखने के लिए प्रेरित किया। अप्पा जी की सबसे प्रमुख और समर्पित शिष्याओं में से एक हैं। आप ने 'गिरिजा दर्शन ट्रस्ट' की स्थापना की है, जो विशेष रूप से आप के पिता पंडित सुदर्शन शर्मा जी व विदुषी गिरिजा देवी जी की शैली और बनारस घराने की बारीकियों को अगली पीढ़ी तक पहुँचाने का कार्य कर रहा है। [6] गिरिजा देवी ने अपनी कला को स्वयं तक सीमित न रखकर शिष्यों की एक लंबी परंपरा तैयार की। इन कलाकारों ने बनारस की चैती, कजरी और ठुमरी को आधुनिक श्रोताओं तक पहुँचाया है।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: बनारसी परम्परा की गायिकाओं की मुख्य विशेषता ये रही की वे ध्रुपद, धमार, ख्याल, ठुमरी आदि गायन की विभिन्न शैलियों पर समान अधिपत्य रखती थीं । बेग़म अख्तर ,रसूलन बाई ,सिद्धेश्वरी देवी,गिरिजा देवी जैसी गायिकाएं विश्व विख्यात कलाकारों की श्रेणी में गिनी जाती हैं। बनारस घराने की महिला स्वर परंपरा गिरिजा देवी के प्रयासों से ही आज पल्लवित हो रही है। उन्होंने शास्त्रीयता और लोक-संवेदना का जो अद्भुत समन्वय स्थापित किया, वह आज की महिला कलाकारों के लिए एक महान विरासत है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गोस्वामी, (डॉ.) हरिकिशन (2014) भारतीय संगीत की परम्परा, द्वितीय संस्करण, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली
2. मिश्र कामेश्वर नाथ (2018) काशी की संगीत परम्परा,लुमिनस बुक्स,वाराणसी
3. सिंह, लावण्या कीर्ति, संगीत संजीवनी, (2018) कनिष्क पब्लिशर्स , डिस्ट्रीब्यूटर्स
4. संगीत मासिक पत्रिका, ठुमरी अंक, जनवरी-फरवरी, 2003
5. शर्मा, (डॉ.) लोकेश (2016) संगीत सरिता, प्रथम संस्करण, नैतिक प्रकाशन, गाजियाबाद (उ. प्र.)
6. विदुषी मालिनी अवस्थी जी से साक्षात्कार द्वारा प्राप्त जानकारी ।